॥ श्रीमते रामानन्दाय नमः ॥

॥ श्री सीता रामाभ्यांनमः ॥

अनूपम उपहार

श्री सीता रहस्यम्

मन्त्र राजपरम्परा, व नित्य पदावली
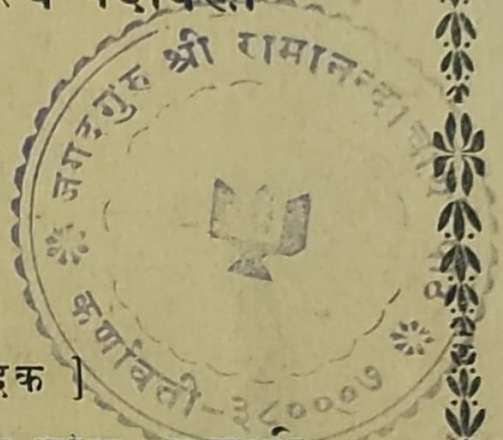
[लेखक व सम्पादक]

श्री स्वामी राम नारायण दास शास्त्री

श्री स्वामी शीतल दास जी का स्थान, अस्सी, काशी

व

श्री सद्गुरु सदन पापमोचन (गोला) घाट अयोध्या।

[संशोधकः]

श्री रामाधार चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य्यः

काशी हिन्दू विश्व विद्यालय संस्कृताध्यापकः

प्रकाशकः-

श्री १०८ श्रीमान् महान्त रामसूरत शरण जी महाराज

❀ सम्मतिः ❀

वैदेही श्री सीता का रहस्य बहुत ही सूक्ष्म है। आदिशक्ति वस्तुतः शक्तिमान् से भिन्न न होते हुए भी व्यवहारदृष्टि से भिन्न हैं। जैसे—जल से तरङ्ग भिन्न नहीं है, फिर भी जल की तरङ्ग—यह व्यवहार प्रसिद्ध है। जगत् का व्यवहार दो के बिना सम्भव नहीं, शक्ति और शक्तिमान् के आधार पर ही यह विश्व गतिशील है। इन्हें चाहे आप प्रकृति-पुरुष शब्द से कहें, सीता राम शब्द से या राधा कृष्ण शब्द से समझें, बात एक ही है, केवल नाम को लेकर विवाद होता है। हाँ, "बात एक ही है"—यह बात भी कुछ दिन सत्सङ्ग करने के बाद ही समझ में आती है। अस्तु !

स्वामी श्री रामनारायण दास जी ने बड़ी तत्परता के साथ श्री सीता के सम्बन्ध में यह संग्रह प्रस्तुत किया है। इनका परिश्रम स्तुत्य है।

मुझे विश्वास है कि इस छोटी पुस्तिका से श्रद्धालु मनुष्य के चित्त में आदिशक्ति के प्रति विशेष जिज्ञासा बढ़ेगी।

माधव शुक्ल
सीतानवमी
सं० २०२३ वि०

रामाधीन चतुर्वेदी
व्याकरणाध्यापक
काशी हिन्दू विश्व विद्यालय,
वाराणसी।

❁ श्री सीतायै नमः ❁

॥ श्रीमते रामानन्दाय नमः ॥

❁ श्री सीतारहस्यम् ❁

इच्छाज्ञानक्रियाशक्तिस्त्रयं यद् भावसाधनम् ।
तद् ब्रह्मसत्ता सामान्यं सीतातत्त्वमुपास्महे ॥

कलि पावनावतार पूज्यपद कविवर श्री गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज अपनी विनय-पत्रिका में और महाकाव्य श्री रामचरितमानस में जगज्जननी श्री सीताजी को "सर्वेश्वरी" एवं "सर्वश्रेयस्करी" कहा है।

जयति श्री जानकी भानुकुल-भानुकी प्राण प्रिये बल्लभे तरणिभूपे ।
राम आनन्द-चैतन्यघन विग्रहाशक्ति आह्लादिनी साररूपे ॥
जयति चितचरण चिन्तनि जेहि धरति हृतकामभयकोहमदमोहमाया ।
रुद्रविधिविष्णु सुरसिद्ध वन्दित पदे जयति "सर्वेश्वरी" रामजाया ॥
(पद ४०)

उद्भवस्थितिसंहार कारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामबल्लभाम् ॥

अर्थ—उत्पत्ति पालन और संहारकर्त्री दुःखों को हरने वाली तथा सभी कल्याणों को देने वाली श्री राम प्रिया सीता जी को मैं नमस्कार करता हूँ।

यहाँ "रामबल्लभा" शब्द सीता जी के लिये प्रयुक्त किया गया है। अतः राम का ज्ञान होने के पश्चात् ही उनकी प्रेयसी का ज्ञान सुलभ से होगा। इस बात को ध्यान में रखकर प्रथम रामतत्त्व को संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं :—

रामः साक्षात्परं ज्योतिः परं धाम परः पुमान् ।
आकृतौ परमोभेदो न सीता रामयोर्यतः ॥
(अद्भुतरामायण सर्ग १-१९)

अर्थ-श्रीराम जी साक्षात् परं ज्योति परं धाम सबसे परे पुरुष हैं। श्री सीताराम की आकृति में भेद होते हुये भी तत्त्वदृष्टि से कुछ भी भेद नहीं है।

श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने स्पष्ट रूप से कहा है :—

गिरा अर्थ जल बीचिसम, कहियत भिन्न न भिन्न ।
बन्दउँ सीता रामपद, जिनहिं परम प्रिय खिन्न ॥

अर्थ-जिस प्रकार वाणी और अर्थ एवं जल और जल की तरङ्ग ये दोनों कहने मात्र के लिये भिन्न हैं यथार्थतः इनमें कुछ भी भेद नहीं है, इसी प्रकार सीताराम में कुछ भी भेद नहीं है।

" प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादि उभावपि "

इस गीता के कथनानुसार प्रकृति पुरुष दोनों अनादि हैं।

अपि च-" शक्तिः शक्तिमतोरभेदः " इस न्याय के अनुसार शक्ति एवं शक्तिमान् दोनों अनादि हैं। अतः शक्ति शक्तिमान् से कभी भी पृथक् नहीं रह सकती। जैसे-सूर्य की प्रभा सूर्य से पृथक् नहीं है तथा चन्द्रमा की चाँदनी चन्द्रमा से अलग नहीं हो सकती। वैसे ही राम से सीता पृथक् नहीं है।

जगज्जननी अविनाशिनी भगवती सीता जी सभी रूपों वाली, निमेष एवं उन्मेष काल से लेकर उद्भव पालन और संहार कर्तृत्व तथा अनुग्रह आदि समस्त सामर्थ्यों से युक्त साक्षात् शक्ति रूपा है।

सीता शब्द का अक्षरार्थ नीचे लिखित है :—

सीता शब्द में चार अक्षर (स् ई त् आ) हैं ।

स् = सकार का अर्थ सत्य ऋत प्राप्ति और सोम है ।

ई = ईकार का अर्थ अव्यक्त रूपा पराशक्ति ।

त् = तकार का अर्थ महातेजोमया ।

आ = आकार का अर्थ ब्रह्मात्मिका ।

इस प्रकार सीता शब्द का अर्थ सत्यरूपा महातेजोमया ब्रह्मात्मिका पराशक्ति है ।

इनके तीन रूप हैं :—

१—शब्द ब्रह्ममयी (साक्षाद् ब्रह्मरूपा) अर्थात् परात्पर ब्रह्मरामरूपा ।

२—बुद्धिस्वरूपा = ज्ञानस्वरूपा ।

३—अव्यक्तरूपा है ।

एकबार देवताओं ने प्रजापतिब्रह्मा जी से पूछा—श्री सीता जी कौन हैं ? उनका क्या स्वरूप है ? ब्रह्मा जी ने कहा वे शक्तिरूपा ही श्री सीता जी हैं ।

मूल प्रकृतिरूपत्वात्सा सीता प्रकृतिः स्मृता ।
प्रणव प्रकृतिरूपत्वात्सा सीता प्रकृतिरुच्यते ॥

(सीतोपनिषद्)

अर्थ—मूलप्रकृति स्वरूप होने से ही उन सीता जी को प्रकृति कहा गया है तथा भगवती सीता जी स्वयं ही प्रणवरूपिणी प्रकृति है । अर्थात् प्रणव = अक्षर स्वरूपा महत्सत्ता है, इस कारण से यहाँ उसी अर्थ में प्रकृति कहा गया है ।

यह प्रकृतितत्त्व उभयविध है-नित्यविभूति और लीला विभूति ये दोनों विभूतियाँ अनादि हैं। सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्थामूलप्रकृतिः।

अर्थ—सत्व रज तम की समान व्यवस्था को मूल प्रकृति कही जाती है।

सत्व रज तम की विषमावस्था को कार्य रूपा प्रकृति कही जाती है। यथा :--

"मूलप्रकृतिरविकृतिमहदादयः प्रकृति विकृतयः सप्त।"

सांख्य कारिका-३)

अर्थ--यह मूल प्रकृति विकृति रहित है। परन्तु महदादिरूप विकारों को उत्पन्न करती है।

श्रीरामसानिध्यवशाज्जगदानन्ददायिनी ।
उत्पत्तिस्थिति संहारकारिणीं सर्व देहिनाम् ॥
सा सीता भवति ज्ञेया मूल प्रकृतिसंज्ञिका ।
प्रणवत्वात्प्रकृतिरिति वदन्ति ब्रह्मवादिनः ॥

(रामोत्तर तापिन्युपनिषद् ३-४)

अर्थ-जगज्जननी भगवती 'श्री' जी राम जी के सामीप्य होने से जो सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति पालन संहार कर्त्रीत्व शक्तिरूपा स्थिति है, वे जगदानन्ददायिनी सीता नाद विन्दु स्वरूपा हैं। प्रणवरूपा अर्थात् प्रणव से अभिन्न होने के कारण ही, उन्हें ब्रह्मवेत्ता लोग प्रकृित कहते हैं।

वे सीता जी सर्व वेदमयी, सर्व देवमयी, सर्व लोकमयी, सर्व कीर्तिमयी, सर्व धर्ममयी, सर्वाधार भूता, कार्यकारणरूपा, चेतन एवं जड़ दोनों की स्वरूपभूता, ब्रह्मा से लेकर जड़ पदार्थों तक आत्मभूता, इन सबके गुण एवं कर्म के भेद से सबकी शरीररूपा, पञ्चमहाभूत, दश इन्द्रियाँ मन एवं प्राणरूपा हैं।

" सीताया मूलभूतायाः प्रकृतिश्चरितं महत् । "
(यहाँ से ५ श्लोक तक अद्भुत रामायण है)

अर्थ—भरद्वाज ऋषि जी कहते हैं कि मूलभूत प्रकृति सीता जी का चरित्र बहुत बड़ा है।

जानकी प्रकृति सृष्टेरादिभूता महागुणा ।
तपः सिद्धिः स्वर्गसिद्धिर्भूतिर्मूर्तिमती सती ॥

अर्थ—श्री जानकी जी सृष्टि की आदि भूत महागुण सम्पन्न प्रकृति है, तप की सिद्धि स्वर्ग की सिद्धि षडैश्वर्य्यरूपिणी मूर्ति मती सती हैं।

विद्याऽविद्या च महती गीयते ब्रह्मवादिभिः ।
ऋद्धि सिद्धिर्गुणमयी गुणातीत गुणात्मिका ॥

अर्थ—ब्रह्मवेत्ता लोग सीता जी को विद्या और अविद्या ही महान् रूप मे गाते हैं सीता जी ऋद्धि सिद्धि गुणमयी गुणातीत और गुणात्मिका हैं।

ब्रह्मब्रह्म ण्डसभूता सर्वकारणकारणम् ।
प्रकृतिर्विकृतिर्देवी चिन्मयी चिद् विलासिनी ॥

अर्थ—सीता देवी समस्त ब्रह्माण्ड उत्पन्न करती हैं, सब कारणों के कारण हैं। प्रकृति और विकृति स्वरूपा चिन्मयी एवं चिद् विलासिनी हैं।

महाकुण्डलिनी सर्वानुस्यूता ब्रह्मसंज्ञिता ।
यस्या विलसितं सर्वं जगदेतच्चराचरम् ॥

(यहाँ तक अद्भुत रामायण है, १-१३, १४, १५, १६)

अर्थ—सीता जी सबको उत्पन्नकर्त्री, महाकुण्डलिनी ब्रह्मसंज्ञिका हैं। उसके विलास के द्वारा यह चराचर जगत् सुभाषित हो रहा है।

प्रकृति शब्द से भी इसी तत्त्व का बोध होता है।

" कार्यकरण कर्तृत्त्वे हेतुः प्रकृति रुच्यते । "
गीता अ० १३, २०)

अर्थ—कार्य=आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी, एवं, शब्द स्पर्श, रूप, रस, गन्ध। करण=बुद्धि अहंकार, मन, चित्त, एवं, श्रोत्र त्वचा, रसना, नेत्र, घ्राण और हस्त, पाद, उपास्थ, इत्यादि इन्द्रियों के उत्पन्न करने में हेतु प्रकृति ही कही जाती है।

" मम योनि र्महद् ब्रह्म तस्मिन्गर्भंदधाम्यहम् । "
(गीता अ० १४-३)

अर्थ मेरी महद् ब्रह्मरूपा अर्थात् त्रिगुणमयी माया सम्पूर्ण-भूत प्राणियों का आधार है। इसके आधार से सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है।

यामाधाय हृ द ब्रह्मन् ! योगिनस्तत्त्वदर्शिनः ।
विघट्टयन्ति हृद्ग्रन्थिं भवन्ति सुखमूर्तिका ॥
(अद्भुत् रामायण १-१७)

अर्थ-श्री बाल्मीकि जी भरद्वाज ऋषि से कहते हैं कि हे ब्रह्मन् ! तत्त्व दर्शी योगिजन सीता जी को अपने हृदय में धारण करके हृदय की अज्ञान को नष्टकर सुखी होते हैं।

एक समय जनकपुर में राजा जनक जी और महाराज्ञी ये दोनों यज्ञभूमि के क्षेत्र में हल चला रहे थे। उसी से ही सीता जी का प्रादुर्भाव हुआ इसलिये सीता नाम से प्रसिद्ध हुईं।

पृथिवी रत्नगर्भा है, अतः एक से एक अनमोल रत्न धरती से प्रकट होते रहते हैं। रत्नगर्भा ने एक रत्न सीता के रूप में प्रकट किया। जैसे—पृथिवी में सब गुण होते हैं, वैसे ही सीता जी में सभी गुण हैं, अर्थात् सहिष्णुता क्षमता पालन पोषण शक्ति भक्ति आदि हैं।

यह कृषि की अधिष्ठात्री देवी सीता जनक जी को दर्शन दी। सीता का अर्थ—हलाग्रभाग भी है।

आदि कवि बाल्मीकि जी के शब्दों में है :—

अथ मे कृषतः क्षेत्रं लाङ्गलादुत्थिता ततः ।
क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्ना सीतेति विश्रुता ॥
(वा० रा० बा० का० सर्ग ६६–१३. १४)

अर्थ—राजा जनक जी स्वयं कहते हैं कि मैंने हल जोतते हुये हल के फाल से प्राप्त किया था। अतः यह सीता के नाम से प्रसिद्ध हुई है।

अपिच - सीतालाङ्गलपद्धतिस्तज्जन्यत्वात् व्यपदेशः, अनेन अयोनित्वोक्ते दिव्यलोकवासकालिक सौन्दर्य न्यूता नोक्ता।

सीतानाम हलाग्रभाग रेखा हैं, अतः इससे जायमान होने से सीतानाम से प्रसिद्ध हुई। इस अयोनित्व उक्ति से दिव्य साकेतलोक निवास की सुन्दरता की कुछ कमी नहीं आई।

वही पराशक्ति मूलप्रकृति आदिशक्ति जगज्जननी अपने निज-जन कल्याणार्थ भूतलपर अवतीर्ण होकर अपनी लीला एवं अपने दिव्य स्वरूप के दर्शन से संसार के प्राणियों को उद्धार कर रही हैं। उनके अवतार काल का अत्यन्तसुन्दर वर्णन शब्द कल्प द्रुम ग्रन्थ में इस प्रकार है :—

अयोनिजा पद्मकरा बालार्क शतसन्निभा ।
सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुन्दरी ॥

अर्थ—अलौकिक उत्पत्ति वाली कमल के समान कोमल एवं लाल हाथ वाली और प्रातः कालीन सैकड़ों सूर्य के सदृश तथा हलाग्र-भाग से उत्पन्न हुई, सीता जी बाल भाव से ही सुन्दरी हैं।

सीता जी के प्रादुर्भाव का समय शास्त्रों में इस प्रकार वर्णित है :—

❀ पद ❀

जय श्रीजानकि बल्लभलाल ।
मणि मंदिर श्रीकनक भवन में विपुल रंगीली वाल ॥
कोई गावत कोई बीन बजावत कोई मृदंग करताल ।
श्रीयुगल प्रिया रिझवति दोऊ लालन छबि लखि भई सो निहाल ॥

❀ पद ❀

सुन्दर बदन विलोकि कै नयनन फल लीजै ।
जानकिबल्लभ लाल की सखि आरत कीजै ॥
सुन्दर ललित कपोलन पै झुकि अलक विराजै ।
कंठे कंठ सुहावना गज मुक्ता राजै ॥
पाग बने जरतार के डुपटा जरतारी ।
पटुका है पचरंग की मणि जटित किनारी ॥
सिय जू की सोहै लाल चूनरी छबि अधिक विराजै ।
रसिक अली की स्वामिनि भूषण छबि छाजै ॥

❀ पद ❀

सिया सिय बल्लभलाल की सखि आरति करिये ।
दम्पति छवि अवलोकि कै हिय नयनन धरिये ॥
अंग अनूप सुहावने पट भूषण राजै ।
नेह भरे दोऊ रसिक सुभग सिंहासन राजै ॥
मन्द मन्द मुसकाय कै सिय गल भुज धारे ।
ललकि लई उर लाय प्राण प्रीतम निज प्यारे ॥
चँवर छत्र कोऊ लिये बाजने विपुल बजावैं ।
श्रीप्रेमलता उर उमगि सुमन नचि नचि बरसावैं ॥

❀ पद ❀

अब हमारे प्राण प्रीतम प्यारे अलसाने लगे।
छिनहिं छिन अंगड़ाइयां लै लै के जमुहाने लगे॥
चञ्चलाहट हट गई उत्पन्न भोलापन हुआ।
नींद से माते नयन नभकञ्ज सकुचाने लगे॥
रैनहु वीती बहुत नभ मध्य उड़गन आ गये।
वीतराग विहागवी गायक गुणी गाने लगे॥
दूसरी नौबत बजो घड़ियाल जन दीनो गजल।
पहरू आये अपर पहरे को बदलाने लगे॥
लै चलो हरिजन उठाके प्यार को सुख सेज पर।
सैन छवि निरखन को अब मम नयन ललचाने लगे॥

—:*❀*:—

यह द्वादस रस राज पद गावैं सुनहिं सुसन्त।
तिनहीं प्रेम सुख मोदमय देहिं सदा सिय कन्त॥

॥ शुभ सूचना ॥

छात्रों के लिये अपूर्व अवसर

प्रमथा मध्यमा प्राज्ञ विशारद एवं बारहवीं, बी० ए० समकक्ष विद्यार्थियों के लिये पुस्तक अनुवाद के लिये उपयोगी है।

१- "व्याकरण तत्त्व प्रकाश" ३७५ पृष्ठों में ($५\frac{1}{2}'' \times ६''$) का मूल्य ४) ५० पै०।

२- "काव्य चन्द्रकला" ८० पृष्ठों ($४\frac{1}{2} \times ७''$) का मूल्य १) है। इसमें अभिधा, लक्षणा, व्यञ्जना, ६ रस, अलंकार और छन्द भी हैं।

कुछ और भी अन्य पुस्तकें नीचे लिखित हैं :—

३- "छन्दोविज्ञान" यह प्रथमा के लिये है।

४- "त्रिभाषा पथ प्रदर्शक" यह ६, १०वीं कक्षा के लिये है।

५- "श्रीरामनाम महिमा"

६- "श्रीसीतारहस्यम्"

७- "ब्रह्म गायत्रीमंत्र में श्रीरामतत्त्व"

८- "विशिष्टाद्वैत परिचय"

९- "श्रीगीतामाहात्म्य"

१०- "श्रीज्योतिर्ज्ञानमार्तण्ड"

११- "श्रीनृसिंहभगवान् और प्रहलाद चरित"

उपर्युक्त पुस्तकों का मिलने का पता :—

श्री मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, बुक डिपो, कचौड़ीगली, वाराणसी।

लेखक :—

स्वामी रामनारायण दास शास्त्री

अखिल भारतीय रामानन्द युवक-सघ प्रकाशन, द्वितीय वर्ष, वाराणसी

त्रेतायुगे उत्तरांशा गतेकमलनी पतौ ।
सर्गातु निकर श्रोष्ठ ऋतौतु कुसुमाकरे ॥
मासि पुण्यतमे विप्रः माधवे माधव प्रिये ।
नवम्यां शुक्लपक्षे च वासरे मंगले शुभे ॥
सार्प्ये ऋक्षे च मध्याह्ने जानकी जनकालये ।
आविर्भूता स्वयं देवी योगेषु गतिरुत्तमा ॥

अर्थ—मार्कण्डेय ऋषि गौत्तम जी से कहते हैं-कि हे गौत्तमजी। त्रेतायुग में सूर्य उत्तरायण के समय वसन्त ऋतु में तथा भगवान् के प्रिय माधव (वैशाख) मास शुक्ल पक्ष नौमि तिथि शुभ मंगलवार को आश्लेषा नक्षत्र में उत्तम योग मध्याह्ने (दोपहर) में राजा जनक के यहाँ जानकी देवी स्वयं आविर्भाव हुई।

सीतोपनिषद् में तो स्पष्ट शब्दों में इन्हे महामाया कहा गया है—

दिव्यालङ्कारस्रक्मौक्तिकाद्याभरणालकृता ।
महामाया अव्यक्तरूपिणी च व्यक्ता भवति ॥

अर्थ—दिव्य अलंकार माला चन्दन मौक्तिकादि आभूषणों से विभूषित और अव्यक्तरूपिणी महामाया व्यक्तरूपा श्री सीता जी प्रकट हुई।

जानक्यांशादिसंभूताऽनेकब्रह्माण्डकारणम् ।
सा मूल प्रकृतिर्ज्ञेया महामायास्वरूपिणी ॥

(महारामायण)

अर्थ-श्री जानकी जी के अंशादि से अनेकों ब्रह्माण्ड उत्पन्न हुए हैं, महामायास्वरूपिणी सीता जी को मूल प्रकृति जानना चाहिए।

हनुमान् जी से सीता जी स्वयं कहती हैं-

मां विद्धि मूल प्रकृतिं सर्गस्थित्यन्तकारिणीम्।
तस्य सन्निधिमात्रेण सृजामीदमतन्द्रिता ॥

(अध्यात्मरामायण सर्ग १-१४)

अर्थ-हे वत्स ! मुझे संसार की उत्पत्ति पालन और संहार करने वाली मूल प्रकृति जानो। मैं ही आलस्य रहित होकर राम जी के सन्निधिमात्र = संकल्पानुसार से ही इस विश्व की रचना किया करती हूँ।

श्री गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में-

जासु अंश उपजहि गुण खानी। अगणित लच्छि उमा ब्राह्मानी ॥
भृकुटि विलास जासु जग होई। राम वाम दिशि सीता सोई ॥

(रामचरित मानस बा० का० दो० १४७ के नीचे चौपाई)

उमा रामा ब्रह्मादि वन्दिता। जगदम्बा सन्तत मनिन्दिता ॥
जासुकृपाकटाक्षसुर चाहत चितवन सोइ।
राम पदार विन्दरति करति सुभावहिं खोइ ॥

(रामचरित मानस उ० का० दो० २४)

सीता जी प्रभावरुपा आदि शक्ति हैं-
"सीता इति त्रिवर्णात्मा साक्षान्मायामयी भवेत्"

(सीतोपनिषद्)

अर्थ-सीता जी का तीन रङ्ग हैं अर्थात् सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण साक्षात्मायामयी हुई हैं।

अव्यक्तनाम्नी परमेशशक्तिरनाद्यविद्यात्रिगुणात्मिका परा।
कार्यानुमेया सुधियैव माया यया जगत्सर्वमिदं प्रसूयते ॥

(विवेकचुडायणिग्रन्थ)

अर्थ-अव्यक्तनामवाली रामजी की त्रिगुणात्मिका अनादि शक्ति प्रपञ्च से परे है, जिसके कार्य्य द्वारा ही विद्वानों से जाना जाता है,

कि जिस माया के द्वारा यह संपूर्ण जगत् उत्पन्न होता है।

त्वयैवोत्पादितं सर्वं जगदेतच्चराचरम्।
त्वमेवासि महामाया मुनीनामपि मोहनी ॥
त्वदायात्ता इमे लोकाः श्रीसीता वल्लभा परा।
वन्दनीयासि देवानां सुभगे ! त्वां नमाम्यहम् ॥

(शब्दकल्पद्रुमग्रन्थ में)

अर्थ—श्री मार्कण्डेय ऋषि ने कहा—हे सीते ! तुमने ही इस समस्त चराचर जगत् को उत्पन्न किया है और तू ही महामाया रूप होकर मुनियों के मोहित करने वाली हो। तुम्हारे आधीन सभी लोक हैं, तुम श्रेष्ठ स्वामिनी हो हे सुभगे ! तू देवताओं के वन्दनीय हो अतः तुम को मैं नमस्कार करता हूँ।

×× । तव प्रभाव जग विदित न केही (अयो० का० दो० १०३)
लोकप होहिं विलोकत तोरे। तेहि सेवहिं सब सिद्धि कर जोरे॥
जानी सिय बरात पुर आई। कछु निज महिमा प्रकट जनाई॥
हृदय सुमिरि सब सिद्धि बुलाई। × × × × × ॥

सिद्धि सब सिय आयसु अकनि गईं जहाँ जनवास।
लिये संपदा सकल सुख सुरपुर भोग बिलास॥

(रामचरित मानस बा० का० दो० ३-६)

सीता जी प्रलय काल के समय में विश्राम करने के लिये भगवान् के दाहिने वक्षः स्थल पर श्रीवत्स की आकृति को धारण कर विश्राम करती हैं, और श्री लक्ष्मी के रूप में भगवान् रामजी के संकल्पानुसार संपूर्ण लोकों की रक्षा के लिये कल्याणरूप में प्रकट होती हैं। अतः सीता जी साक्षात् योगमाया हैं।

मूल प्रकृति सीताजी ही जगत् निर्माण में प्रधान कारण हैं, कहा भी है—

"यामाश्रित्य जगल्लीलां करोति रघुनन्दनः"

नहीं तो सृष्टि कहाँ ?

श्री गोस्वामी तुलसीदासजी के शब्दों में-

आदि शक्ति छबि निधि जग मूला। वाम भाग शोभित अनुकूला॥
(रामचरित मानस बा० का० दो० १४७ के नीचे चौ०)

श्री सीता जी श्रियों की भी 'श्री' हैं-—

"वसुधायाश्च वसुधां श्रियः श्रींभर्तृवत्सलाम्"
(वा० रा० यु० का० सर्ग ११५-२२)

व्याख्या—वसुधायाः सकलजगदाश्रयभूत क्षितेः, वसुधायाश्रयं श्रियं श्रियः, लक्ष्योः अपि श्रियं पूज्यामित्यर्थः।

अर्थ-श्रीसीता जी वसुधा की भी वसुधा=आधार हैं, और श्री=संपत्ति की भी श्री शोभा हैं। तथा अपने स्वामी की प्रति अत्यन्त अनुराग रखने वाली हैं।

"श्रियः श्रीश्चभवेदग्र्या कीर्त्या कीर्तिक्षमाक्षमा"
(वा० रा० अयो० का० सर्ग ४४-१५)

व्याख्या-अग्र्या=रामाग्रे गमनशीला, क्षमाक्षमा=क्षमायाः पृथिव्याः क्षमा शन्तिर्यस्या सा सीता। किञ्च, क्षमायाः शांतरेपि क्षमा शान्ति, अतिशन्तिर्विशिष्टा इत्यर्थः। त्रिञ्च, क्षमया पृथिव्या क्षम्यते सह्येत पाल्यते इत्यर्थः। सा सीता तु श्रियः लक्ष्म्याः श्रीः स्वामिनी, इत्यर्थः। अत एव कीर्त्याः राम यशसः कीर्तिः कारणभूता इत्यर्थः।

अर्थ—राम जी के आगे गमनसीला, पृथिवी की भी क्षमा करने वाली अत्यन्तशान्ति विशिष्टा हैं, श्री सीता जी श्रियों की भी श्री आद्याशक्ति सर्वेश्वरी हैं अर्थात् लक्ष्मी में जो लक्ष्मीत्व की शक्ति है वह भगवती सीता जी से प्राप्त हुई है, अत एव रामजी की कीर्ति को बढ़ाने वाली श्रियों की श्री सीता जी हैं।

एवं ज्ञेया परा नित्या सीता ब्रह्मसुविग्रहा।
सर्व शक्तिमयीधात्री सर्वशक्ति परा तथा॥
(अद्भुत रामायण १-२०)

अर्थ-इस प्रकार नित्य परा ब्रह्मविग्रहरूपा श्री सीता जी को जानना चाहिए। वे सर्वशक्तिमयी सबको धारण करने वाली तथा सब शक्तियों से परे (श्रेष्ठ) हैं।

श्रयन्तीं श्रियमाणाञ्च श्रीणातीं शृण्वतीमपि।
शृणाति निखिलान् दोषान् श्रीणाति च गुणैर्जगत्॥
श्रीयते चाखिलैर्नित्यं श्रयते च परं पदम्।
श्रीशब्दस्य हि भावार्थः सूरिभिरनुमीयते॥
श्रयन्त्येतामिति श्रीः। (अभियुक्तसारबल्याम् ग्रन्थे)

श्रिञ् सेवायां धातोः "बाहुलकात् कर्मणि क्विप्, "क्विब्वचि, प्रच्छ्यायतस्तु' कटप्रुजु श्रीणांदीर्घोऽसंप्रसारञ्च" इतिवार्तिकेन क्विप्, प्रकृतेर्दीर्घश्च विभक्तिकार्ये श्रीः इतिरूपं निष्पन्नम्।

यद्यपि क्विप् प्रत्यये कर्ता में ही होता है, परन्तु "श्रीयतेचाखिलैर्नित्यम्" इस निरुक्ति वचन के अनुसार कर्म में भी क्विप् होता है।

१- श्रीयते ब्रह्मेन्द्ररुद्रादि मुनिवर गणैश्चचराचर चेतनैश्च सेव्यते इति श्रीः।

जो ब्रह्मा इन्द्र रुद्र मुनिश्रेष्ठ किं बहुना अर्थात् चराचर समस्त जगत् से सेवित हैं, वे श्री जी हैं।

२- शॄ हिंसायां धातु से-शृणाति शरणागतानां जन्मजन्मान्तरीय महापातकरूपदोषान् हिनस्ति नाशयतीति श्रीः।

शरणागतों के जन्मजन्मान्तरीय महापातक रूप दोषों को नाश करती हैं, वह श्री जी हैं।

३- श्रीञ् पाके धातु से भी क्विप् प्रत्यय करने पर श्री शब्द बनता है।

श्रीणाति कैङ्कर्यं परिपक्वं करोतीति श्रीः। मनोऽभिलषित फल प्रदान कर शरणागतों की किङ्करता को परिपक्व करना ही

श्री का मुख्यार्थ है।

४- श्रुश्रवणे धातु से भी "औणादि के" इति डि प्रत्यये टिलोपे दीर्घे च कृते श्री शब्द बनता है।

चेतनकृत् किञ्चिदपि प्रार्थना रूप विज्ञापनं भगवन्तं रामं श्रावयति अथवा स्वयं वात्सल्य सौशिल्य दिव्यगुण जलनिधित्वात् शृणोतीति श्रीः।

शरणागतों की थोड़ी सी भी प्रार्थना हो तो उसको विस्तार पूर्वक भगवान् राम को सुनातीं है। अथवा—वात्सल्य सोशिल्यादि दिव्यगुणों के समुद्र श्री जी स्वयं सुनती हैं वह श्री जी हैं।

"श्रीयते, श्रयते, शृणाति, श्रीणाति, शृणोति, श्रावयति" इत्यादि श्री शब्द की व्युत्पत्तियाँ होतीं हैं।

सीता शब्द की व्युत्पत्तियाँ—

१ षून् प्राणिप्रसवेधातु से--सूयते चराचरं जगत्, इस विग्रह से जगत् की उत्पत्ति का बोध होता है। अर्थात् सीता जी से ही जड़ और चेतन उत्पन्न हुए हैं।

२ षु प्रसवैश्वर्ययोः धातु से भी जगत् की उत्पत्ति पालन पोषण और संरक्षण कर्त्रीत्व का बोध एवं षडैश्वर्य से युक्त भगवती सीताजी का ज्ञान होता है।

३ षिञ् बन्धने धातु से "बहुलंछन्दसि" इस सूत्र से क्त प्रत्यये करके "पृषोदरदीनि यथोप दिष्टम्" इस सूत्र से इकार को दीर्घकर देने पर, टाप् होने पर "सीता" शब्द बना है।

सिनाति अथवा सिनोतीति वशं करोतीति।
स्वचेष्टया भगन्तं रामं या सा सीता इति॥

४ षोऽन्त कर्मणि धातु से—स्यति सर्वेषां ब्रह्माण्डानामन्त करोतीति

सीता अथवा—सर्वेषां दुष्टदैत्य दानवराक्षसानामन्तं करोतीति सीता।

प्रलयान्त में संपूर्ण ब्रह्माण्ड के नाश करने वाली अथवा-समस्त दुष्ट दैत्य दानव राक्षसों को नाश करके ऋषि मुनि गौ ब्रह्माण सन्त महात्माओं को सुख पूर्वक निर्भयकर देने वाली सीता जी हैं।

श्रीसीताजी का रहस्य अत्यन्त गुढ़ है। इनकी महिमा का गान शेष भगवान् भी नहीं कर सकते—

सीता की महिमा सुनु भाई।
बरनी न सकै सहस मुख गाई॥

मैंने सन्त महात्माओं के सत्सङ्ग से जो कुछ सुना और श्री सीता जी की महती कृपा हुई। तब इस पुस्तक को आप सज्जन महानुभावों के सन्मुख उपस्थित कर रहा हूँ। यह सब श्री किशोरी जानकी जी की कृपा का फल है। इसमें जो कुछ त्रुटियाँ हो, वह सज्जनवृन्द सुधार लेंगे।

ईश्वर का ज्ञान एक रस रहता है

"ज्ञान अखण्ड एक सीतावर। माया वश्य जीव चराचर"॥

अर्थ—एक सीतापति श्रीराम जी अखण्ड ज्ञान स्वरूप हैं।

ईश्वर अनन्त ज्ञानानन्दैक स्वरूप हैं। "सत्यंज्ञानमनन्तं ब्रह्म" "विज्ञानमानन्दंब्रह्म" इति श्रुतिः, अर्थात् ईश्वर सत् चित् आनंद रूप हैं।

सोइ सच्चिदानन्द घनरामा। अज विज्ञान रूप बल धामा॥

"ज्ञानाकरणकं ज्ञानं प्रत्यक्षम्" ईश्वर के ज्ञान का करण दूसरा ज्ञान नहीं है। अतः ईश्वर को समस्त वस्तुओं का ज्ञान सदा प्रत्यक्ष ही रहता है। इसलिये ईश्वर का ज्ञान प्रत्येक काल में एक रस ही रहता है। ईश्वर को व्याप्ति ज्ञान और शब्दाज्ञान नहीं होता है।

व्याप्तिज्ञान और शाब्दज्ञान बद्ध जीव को ही होता है। जो जीव माया के आधीन है। वही जीव अल्पज्ञ और अभीमानी है।

सो माया वश्य भयउ गोसाई। बँधेउ कीर मरकट की नाईं॥

वह जीव माया के वशीभूत तोता और बन्दर की भाँति बधा हुआ है। 'माया वश्य जीव अभीमानी होता है "पर वश जीव स्व वश भगवन्ता" जीव पराधीन है, अल्पज्ञ है जीव का ज्ञान और अज्ञान बदलता रहता है। अर्थात् जीव का ज्ञान एक रस नहीं रहता है।

हरषविषाद ज्ञान अज्ञाना। जीव धर्म अहमिति अभिमाना।

ईश्वर का ज्ञान सर्वदा एक रस रहता है। "स्वयं ज्योतिः, विज्ञान घनः, आत्माज्ञानमयः" ईश्वर का ज्ञान संकोच विकास से रहित है। प्रत्येक समय में प्रत्यक्ष ही रहता है। श्रुति भी कहती है-"यः सर्वज्ञः स सर्वविद्, यस्य ज्ञानमयं तपः, तस्मादेतद् ब्रह्मनामरूमन्नं च जायते" अतः ईश्वर का ज्ञान एक रस रहता है।

यदि ईश्वर और जीव का ज्ञान एक रस रहता तो जीव संज्ञा ही क्यों होती ? इसलिये यह ज्ञान होता है कि ईश्वर और जीव पृथक् हैं।

श्री सीता जी के अंश से अनंत कोटि उमा रमा ब्रह्माणी होती हैं वही सीता जी अखिलविश्व की रचयित्री माया है, वही मायापति राम है, और चराचर जीव माया के वशीभूत हैं, मायापति एक है और जिव अनेक हैं अर्थात् अनन्त हैं।

विनीत, लेखक—
श्रीस्वामी रामनारायण दास शास्त्री
श्रीशीतलदास जी का स्थान
मु० अस्सी, काशी, वाराणसी-५

स्वाहा शब्द का अर्थ

स्वस्यार्थवाचकः स्वास्तु हकारस्तन्निरोधकः ।
स्वात्मार्थं ब्रह्मणे युज्या त्स्वाहार्थोऽयं निगद्यते ॥

अर्थ—स्वशब्द अपने स्वार्थ का वाचक है, और हकार स्वार्थ धर्म का निरोधक है, अपने आत्मा के लिये भोग्यत्व बुद्धि को त्याग कर आत्म सम्बन्धी समस्त पदार्थों को (ब्रह्मणे) मंत्र प्रतिपाद्य इष्ट देव के लिये समर्पण करता है।

बीजार्थ संप्रदाने च तन्मंत्रार्थोक्त मन्त्रिणे ।
नमः स्वाहा समष्टिभ्यां प्रयुक्तार्थे समर्पणम् ॥

अथ बीजार्थ मंत्र के आदि अक्षर ही मंत्र का बीज होता है। समस्त मन्त्र का तात्पय अर्थ बीज मेंरहता है। बीजार्थ प्रातिपादक चतुर्थी विभक्तियुक्त संप्रदानार्थ में प्रयोजन रहता है और संप्रदानार्थ मंत्र प्रतिपाद्य देवता के लिये हीनिश्चित रहता है, मंत्रार्थ प्रयुक्त इष्ट देवके लिये जपादि कर्म फल समर्पण नमः और स्वाहा इन दोनों का प्रयोग होते हैं। हे इष्ट देव ! यह सब कुछ आपकी ही है मेरा कुछ नहीं है, मैं आपका हूँ, मैं कोई वस्तु नहीं हूँ, मेरा सर्वस्व आपके लिये (स्वाहा) समर्पण है, ऐसी प्रार्थना करनी चाहिये।

स्वाहा और स्वधा ये दोनों शब्द अव्यय बोधक हैं। इनका अर्थ वैदिक यज्ञादि कर्मों में प्रयुक्त होता है। "स्वाहा देव हविर्दाने" स्वाहा शब्द देवताओं के निमित्त अर्थ हव्यकव्यादि दान में प्रयुक्त होते हैं और "स्वाहा च हुत भुक् प्रिया" स्वाहा अग्नि देवकी भार्या का नाम है। स्वाहा शब्द का दो अर्थ होते हैं, एक तो हवि दान हवन करने अर्थ में और दूसरा अर्थ मंत्र जपके फल समर्पण में है।

भगवान् का कौन सा स्वरूप सच्चिदानन्द है ?

भगवान् के सभी नाम सच्चिदानन्द स्वरूप हैं, तथापि श्रीराम

नाम अन्यनामों में से कुछ विशेषता रखता है, क्योंकि अन्यनामों में अथार्थतः "शुद्धसच्चिदानन्दघन" का अर्थ सुघटित नहीं होता:-

सच्चिदानन्द रूपैश्च त्रिभिरेभिः पृथक् पृथक् ।
वर्तन्तेऽन्यानि नामानि सत्यं दृष्टं महेश्वरि ! ॥
नामानि यान्यनेकानि मया प्रोक्तानि पार्वति ! ।
कस्मिंश्चिन्मुख्य आनन्दः सत्यं च गौणमुच्यते ।
कस्मिंश्चित् चित्सतौ मुख्ये गौणंचानन्द उच्यते ॥
(महा रामायण में)

अर्थ—हे महेश्वरि पार्वति ! मैंने सत्य ही देखा है, श्री राम नाम से अन्य नामों में 'सत्, चित्, आनन्द' ये तीनों धर्म घटित नहीं होते हैं, अन्य नामों से, पृथक् पृथक् रूप में, किसी में सत् और आनन्द मुख्य हैं तो चित् गौण है। किसी में सत् और चित् मुख्य हैं तो आनन्द गौण है। किसी में चित् और आनन्द मुख्य हैं तो एवं सत् गौण है।

इसी प्रकार ये तीनों धर्म राम से अन्य नामों में नहीं घटते हैं। यथा :—

चिद् वाचको रकारः स्यात्सद् वाच्याकार उच्यते ।
मश्चैवानन्दवाची स्यात्सच्चिदानन्दमव्ययम् ॥
(महा रामायण में)

अर्थ—हे पार्वति ! रकार चिद् वाचक है आकार सत् वाचक है और रा आनन्द वाचक है, अव्यय श्री राम का वाचक है। अतः राम शब्द में ही तीनों धर्म सत् चित् और आनन्द घटित होते हैं। इसलिये राम ही सच्चिदानन्द परक है।

"एतद् ब्रह्मात्मिका सच्चिदानन्दाख्या इत्युपासि तव्यम्"
(रामोत्तर तापिन्युपनिषद्)

"सच्चिदानन्द रूपोऽस्य परमात्मार्थ उच्यते"
(राम रहस्योपनिषद् अ० ५, मं० ३)

रामं विद्धि परं ब्रह्म सच्चिदानन्दमद्वयम् ।
सर्वोपाधि विनिर्मुक्तं सत्तामात्रमगाचरम् ॥

(अध्यात्म रामायण सर्ग १—१३)

अर्थ – श्री शंकर जी पार्वती से कहते हैं :– हे पार्वति ! तुम श्री राम जी को साक्षात् अद्वितीय सच्चिदानन्द घन पर ब्रह्म समझो, ये निःसन्देश समस्त उपाधियों से रहित, सत्ता मात्र मन एवं इन्द्रियों के अविषय अर्थात् आग्राह्य आनन्द घन निर्मल शान्ति निर्विकार निरञ्जन सर्वव्यापक स्वयं प्रकाश और पाप रहित परमात्मा राम ही हैं ।

जय सच्चिदानन्द जग पावन । अस कहि चलेउ मनोज नशा वन ॥
व्यापक व्याप्य अखण्ड अनन्ता ! अखिल अमोघ शक्ति भगवन्ता ॥
अगुण अदभ्र गिरा गोतीता । सब दर्शी अनवद्य अजीता ॥
निर्मम निराकर निर्मोहा । नित्य निरञ्जन सुख सन्दोहा ॥
प्रकृति पर प्रभु सब उरवासी । ब्रह्म निरीह विरज अविनासी ॥
सोइ सच्चिदानन्द घन रामा । अज विज्ञान रूप बल धामा ॥
चिदानन्द मय देह तुम्हारी । विगत विकार जान अधिकारी ॥
शुद्ध सच्चिदानन्द मय कन्द भानुकुल केतु ॥
चरित करत नर अनुहरत संसृति सागर सेतु ॥

(राम चरित मानस में)

अपने ही उत्कर्ष से ही भूतल पर उनका रामनाम विख्यात हो गया अथवा—वे सबको अभिराम (आराम = आनन्द) चारों ओर से आराम देते हैं । अतः उनका नाम राम है ।

श्रीराम जी से अतिरिक्त परमेश्वर के सभी नाम गौण हैं अर्थात् नारायण विष्णु हरि एवं अनन्त आदि नाम परमेश्वर राम का ही गुण सूचक है :–

रामनाम मया सर्वे नाम वर्णाः प्रकीर्तिताः ।
अत एव रमु क्रीडा नाम्नामीशः प्रवर्तते ॥

(महारामायण में)

अर्थ—श्रीशंकर जी पार्वती से कहते हैं कि हे पार्वति ! समस्त नामों के वर्ण (अक्षर) श्रीराममनाममय हैं, इसलिये क्रीडार्थ श्रीरामनाम ही ईश हैं।

परमेश्वर नामानि सन्त्यनेकानि पार्वति ! ।
परन्तु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम् ॥
नारायणादि नामानि कीर्तितानि बहून्यपि ।
आत्मतेषां च सर्वेषां रामनाम प्रकाशकः ॥
(महारामायण में)

अर्थ—हे पार्वति ! परमेश्वर के नाम अनेकों हैं, परन्तु सबनामों में उत्तम से उत्तम यह राम नाम है, परं च उन सबों के प्रकाशक राम ही आत्मा है।

यद्यपि प्रभु के नाम अनेका। श्रुति कह अधिक एकते एका॥
रामसकल नामनते अधिका। होहुनाथ अघखग गण बधिका॥

ब्रह्मा विष्णु महेशाद्या यस्यांशाल्लोकसाधकाः ।
तमादि देवं श्रीरामं विशुद्धं परमं भजे ॥
(स्कन्धपुराण)

अर्थ – ब्रह्मा विष्णु और महेश एवं लोकपाल जिसके अंश से उत्पन्न होते हैं, उस परम विशुद्ध आदि देव श्रीराम को मैं भजता हूँ :-

अगुण अखण्ड अनन्त अनादि। जेहि चिन्तहिं परमार्थ बादि॥
नेति नेति जेहि वेद निरूपा। निजानन्द निरूपाधि अनूपा॥
शम्भुविरञ्चि विष्णु भगवाना। उपजहिजासु अंशतेनाना॥
सबकर परम प्रकाशक जोई। राम अनादि अवधपति सोई॥
जगत प्रकाश्य प्रकाशक रामू। मायाधीश ग्यान गुण धामू॥
(रामचरित मानस)

विश्वरूपस्य ते राम ! विश्व शब्दा हि वाचकाः ।
तनैवमूलमन्त्रस्ते विश्वेषां बीजमव्ययम् ॥

अचिन्त्योऽयं महाबाहो ! मंत्रश्चिन्तामणिर्विभो ! ।
विहायैनं विमूढात्मा इतस्ततश्च धावति ॥
(स्कन्ध पुराण)

अर्थ—श्रीशंकर जी पार्वती से कहते हैं—हे राम ! तुम विश्व रूप हो विश्व में जितने शब्द हैं वे तुम्हारे ही वाचक हैं, वैसे ही तुम्हारा मूलमन्त्र (राममन्त्र) सब विश्व का अक्षय बीज है। हे महाबाहो ! विभो ! यह तुम्हारा मन्त्र चिन्तामणि रूप है और अचिन्त्य महिमा वाला है, इस मन्त्र को त्याग कर मूढात्मा पुरुष इधर उधर व्यर्थ दौड़ते हैं।

रा शब्दो विश्ववाचको मश्चापीश्वर वाचकः ।
विश्वनामीश्वरो यो ही तेन रामः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ—रा शब्द विश्व वाची और म ईश्वर वाचक है, इसलिये जो संसार का ईश्वर है, उसकोहि राम कहते हैं।

रमते रमया सार्धं तेन रामं विदुर्बुधाः ।
रमाणां रमणस्थानं रामं रामविदो विदुः ॥
(महारामायण में)

अर्थ—रमा के साथ रमण करने से विद्वानों ने उन्हें राम कहते हैं, रमा का रमण स्थान होने से तत्त्व वेत्तालोग उन्हें राम बतलाते हैं।

(नरः)

नृ नये इत्यस्माद् धातोः नरतीति नयतीति विग्रहे "ऋदोरप्" इतिसूत्रेण अप् प्रत्यये गुणेकृते 'नरः' इति रूपं निष्पन्नम्।

समस्त जीवों के कर्मानुसार यथार्थ रूप में न्याय करने से उस परमात्मा का नाम नर हुआ है।

" नरतीति नरः प्रोक्तः परमात्मा सनातनः "
(इतिमनुना उक्तम्)

अतः नर पदवाच्य परात्पर ब्रह्म परमात्मा सनातन भगवान् श्रीराम जी ही हैं।

(नारम्)

"नराणां समूहो नारं तत्रायनं स्थानं यस्य स नारायणः" सब नर नारियों के समूह को 'नारम्' कहते हैं; जिसने सब नर नारियों के अन्तःकरण में अपना 'अयन' रहने का निवास स्थान बना रखा है, वह भगवान् राम ही का नाम नारायण हुआ है।

(नारः)

नर शब्दात् "तस्य समूहः" इति सूत्रेण समूहार्थेऽणि प्रत्यये "तद्धितेष्वचामादेः" इति सूत्रेण आदेरचोवृद्धौ विभक्ति कार्ये नारः इति रूपं सिध्यति।

आम् इत्यस्माद् धातोः, घञि आम इति नारस्य आमोगतिरिति विग्रहे, षष्ठी समासे विभक्तिलुकि च कृते सवर्णदीर्घे नाराम, "पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्" इति सूत्रेण 'ना' इत्यस्यलोपेकृते विभक्ति कार्ये "रामः" इति नरसमूहस्यगन्तव्यार्थे सिध्यति। यथा—
"नृणामेकोगम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव" (महिम्नि)

रमते सर्वभूतेषु स्थावरेषु चराचरे।
अन्तरात्मास्वरूपेण तेनरामेति भण्यते॥

(आर्षवचनम्)

अपि च—नारा अप्सु गृहं यस्य तेन नारायणः स्मृतः।
नारं सृष्ट्वास्थितोऽन्तोऽहं तेन नारायणः स्मृतः॥

अर्थ—नार (जल) को सृजन करके मैंने उसजल में अयन= स्थान किया, इस कारण से मेरा नाम नारायण है।

"महार्णवे शयनोऽप्सु मां त्वं पूर्वमजीजनः"

(वा. रा. उ. सर्ग १०४-४)

अर्थ—ब्रह्मा ने श्रीराम जी से कहा-महार्णवे (समुद्र) में शयन करते समय आपने सर्वप्रथम मुझे उत्पन्न किया है।

नवद्वार वाले शरीर को पुर कहते हैं । ऐसे प्राणिमात्र के पुर (शरीर) में जो सोया हुआ है। वह पुरुष (पुरिषु शेते, अथवा-निवसतीति पुरुषः = अन्तरात्मा है) हम ऐसे पुरुष राम को शुद्ध ज्ञान निष्कामभाव और भक्ति के द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

विष्णु शब्द का विचार—

व्यापकोऽपि हि यो नित्यः सर्वस्मिञ्चराचरेषु ।
विषलृ व्यापकाद् धातोर्विष्णुरित्यभिधीयते ॥

अर्थ—वेवेष्टि, इति विग्रहे विष्लृ व्यापक धातु से 'क्नुः' प्रत्यय लगाने से विष्णु शब्द बना है। कित्वाद् गुण नहीं हुआ है।

सपूर्ण चराचर में नित्य ही व्यापक होने के कारण उनको विष्णु कहते हैं।

अथवा—विष्णुत्वात्सर्वप्राणिनोऽपि भूतेन्द्रिय मनो जीव भावेन शरीरान्तः प्रविशतीति विष्णुः

विष्णु शब्द व्यापक अर्थ अथवा-शरीरान्त में प्रवेश होने के कारण तद्गुण बोधन द्वारा वह ब्रह्मवाचक हुआ। इस लिये विष्णु शब्द भी राम का ही गुण सूचक है।

हरिः—"कथ्यते स हरि नित्यं भक्तानां क्लेशनाशनः"

अर्थ—भक्तों के क्लेश नाशक अर्थात् दुःख हरण करने वाले हैं, इस लिये हरि नाम है। अतः हरि शब्द भी राम का ही सूचक है।

विश्वम्भरः—"भरणं पोषणं चैव विश्वम्भर इति स्मृत":

अर्थ—विश्व के भरण पोषण करने से विश्वम्भर नाम है। अतः राम का ही सूचक है।

अनन्त—यस्यानन्तानि रूपाणि यस्य चान्तं न विद्यते।
श्रुतयो यं न जानन्ति सोऽप्यनन्तोऽभिधीयते ॥

अर्थ—प्रभु के रूप और गुणादि अनन्त हैं, किसी ने अन्त नहीं पाया तथा श्रुतियाँ भी सम्यक् रूप से नहीं जान सकीं, इस

कारण से उसको अनन्त कहा जाता है, वह अनन्त परमात्मा राम ही हैं।

राम अनन्त अनन्त गुणानि। जन्म कर्म अनन्त नामानि॥

वासुदेव—"सर्वे वसन्ति वै यस्मिन्सर्वस्मिन् वसतोऽपि वा।
तमाहुर्वासुदेवं च योगिनस्तत्त्वदर्शिनः॥"

अर्थ--संपूर्ण जगत् का निवास परमेश्वर राम में है, अथवा--समस्त विश्व में वास होने से तत्त्वदर्शी योगि जन उन्हें वासुदेव कहते हैं।

विराट्--"यो विराजस्तनुर्नित्यं विश्वरूपमथोच्यते"

अर्थ--जो विराट् विश्व उनका शरीर है इस लिये उनको विश्व कहते हैं, वह राम ही हैं।

"यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयति"
"यस्य आत्मा शरीरं य आत्मानमन्तरो यमयति"
(बृहदारण्यक उ० अ० ३, ब्रा० ७, म० ३)

अर्थ--यह संपूर्ण जगत् भगवान् राम का शरीर है, इस पृथिवी में व्याप्त रह कर सब को नियमन (शासन) करता है।

आत्मा जिसका शरीर है, आत्मा में व्याप्त रहकर सबको नियमन (शासन) करता है।

राका रजनी भगति तब, राम नाम सोइ सोम।
अपर नाम उडगण बिमल, बसहु भगत उर व्योम॥

अर्थ--नारद जी श्रीराम जी से कहते हैं- कि आपकी भक्ति पौर्णिमासी की रात्रि है और आपका नाम चन्द्रमा है, श्री राम जी से अतिरिक्त जितने भी नाम हैं, वे सब तारागण के सदृश हैं और भगत के हृदयरूपी आकाश में चमकते रहते हैं।

राम अनन्त अनन्त गुण, अमित कथा विस्तार।
सुनि आचरज न मानिहहिं, जिन्हके विमल-बिचार॥

उपनिषद्

उपनिषद् शब्द का अर्थ–उप + नि + सादि + क्विप् , उपनिषाद्-यति ब्रह्मणः समीपं प्रापयतीति, उपनिषद् ।

ब्रह्म के समीप में जीव को जो पहुचा दे उसको उपनिषद् कहते हैं ।

उपनिषद् भगवत्सन्निधि में प्राप्त होने का ही साधन है । भग-वत्स्रूप नहीं, अथवा–ब्रह्म बन जाने का साधन नहीं है ।

उपर्युक्त व्युत्पत्ति से उपनिषदों में ब्रह्म और जीव का ऐक्य प्रतिपादन नहीं होता, यदि ऐसा वाक्य कहीं आया भी हो तो उपनिषद् शब्द की मर्यादा की रक्षा के लिये उस के तात्पर्य को उसी रीति से अर्थ करना चाहिए कि जिससे ब्रह्म जीव का प्राप्य प्रापक भाव सम्बन्ध अवच्छिन्न बना रहे ।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

अर्थ–वह ब्रह्म पूर्ण है, यह ब्रह्माण्ड [जगत] पूर्ण है. उस पूर्ण ब्रह्म से यह पूर्ण जगत उत्पन्न हुआ है, उस पूर्ण में से इस पूर्ण संसार को लेकर भी वह महामहिम्नशाली ब्रह्म पूर्ण ही रहता है ।

सब जीवों के कल्याणार्थ ईशावास्य उपनिषद् के प्रथम मंत्र में ब्रह्म जगत् और जीव इन तीनों के स्वरूप प्रतिपादन किया गया है ।

ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मागृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

अन्वयार्थ - जगत्याम् = ब्रह्माण्डे, ब्रह्माण्ड में । यत्किञ्च=जो कुछ । जगत्=चिदचिदात्मकं पदार्थ जातमस्ति । चेतन और जड़ पदार्थ हैं । तत्सर्वमिदम् = वह सब अर्थात् यह जितने प्रत्यक्ष पदार्थ हैं, और जितने अनुमान से जानने योग्य पदार्थ हैं, वे सब । ईशा = इः सीता,

तस्या इष्टे प्रभवति प्राणनाथत्वेन ईट् ,निखिल ब्रह्माण्डनायको भगवाञ्छ्रीरामः। तेन=श्रीरामेण सकल जगत् के स्वामी सीतानाथ भगवान् श्रीराम जी से।

वास्यम् , आवस्यम्=आच्छादनीयम् स्वरूप व्याप्त्या, ज्ञान व्याप्त्या, शरीर व्याप्त्या वा आसमन्ताद् अवरणीयम्। आच्छादनीय हैं अर्थात् भगवान् ही इस जगत् के स्वामी हैं। जो कुछ है, सब उनका ही है। अतः तेन=उन्ही भगबान् श्रीरामजी से, त्यक्तेन=प्रदत्तेन कर्मानुसार दिये हुए पदार्थों से। भुञ्जीथाः=भोजन करो। प्रभु ने जो कुछ दिये हैं, वह न्याय पूर्वक ही दिये हैं। इस जगत् के अनन्त भण्डार में से प्रभु ने हमें आज इतना ही दिया है। ऐसा मानकर सन्तोष करना चाहिए।

कस्यस्वित्=अन्यस्यकस्यचित्, किसी अन्य के।

धनम्=भोग्यसामग्री धन को, मागृधः=चाहना मत करो।

इस श्रुति में ब्रह्म जीव और प्रकृति इन तीनों का बर्णन है।

"ईशावास्यम्" ब्रह्माण्ड का व्यापकता पूर्वक अस्तित्व का प्रतिपादन किया गया है।

"इदं सर्वम्" इत्यादि से जगत् और जगत् के कारण का प्रतिपादन किया गया है।

"भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्" इत्यादि से जीव का प्रतिपादन किया गया है।

"इदं सर्वम्" से प्रतिभासिक जगत् का बर्णन नहीं है अर्थात् मिथ्या जगत् नहीं समझना चाहिए।

असत् जगत् नहीं समझना चाहिए क्योंकि असत् में सत् की व्यापकता का निरूपण कुसुम के लिये गगनाधारता के निरूपण के समान ही है।

श्रीराम बीज मंत्रार्थ

यावद्वेदार्थगर्भं प्रणवि जगदुदाधारभूतं सबिन्दुम्,
सुव्यक्तरामबीजं श्रुतिमुनिगदितोत्कृष्टषड्व्याप्तिभेदम् ।
रेफारूढ़त्रिमूर्तिप्रचुरतरमहाशक्तिविश्वान्निदानम्,
शाश्वत्संराजतेयद् विविध सकल संभासमानं प्रपञ्चम् ॥

अर्थ - "यद् राम बीजं तत्शाश्वत्संराजते, इत्यन्वयः" श्रीराम तारक मंत्र के आदि में स्थित जो 'रां' है, वह बीज निरन्तर प्रकाशता है।

"यावद्वेदार्थगर्भम्" जितने वेद के गर्भ में अर्थ हैं वे सब 'रां' बीज के गर्भ में स्थित है। इसी 'रां' बीज के अन्दर प्रणव (ॐकार) भी है। इससे इस 'रां' को प्रणवी भी कहा जाता है [प्रणवोऽस्यास्तीति प्रणवी] अर्थात् प्रणव जिस में विद्यमान हो उसको प्रणवी कहते हैं। श्रुति और मुनियों ने इस बिन्दुयुक्त सुन्दर व्यक्तरूप 'रां' बीज को जगत् के उत्कर्ष के लिये आधार भूत माना है।

रामित्यनेन बीजेन ब्रह्ममाया हि चेतनः ।
वदन्ति वेदशास्त्राणि सिद्धाः सिद्धान्तपारगाः ॥

अर्थ-सिद्धान्त पारङ्गत सिद्धजन और वेद शास्त्र कहते हैं कि ब्रह्म माया और जीव ये तीनों 'रां' अन्दर है।

"उत्कृष्टषडव्याप्तिभेदम्" यही 'रां' बीजषडैश्वर्य (भरण पोषण आधार शरण्य सर्वव्यापक करुणा) आदि व्याप्ति से युक्त है, अधिकतर इस 'रां' बीज के रेफ के अन्दर त्रिमूर्ति अर्थात् ब्रह्मा विष्णु और महेश हैं, यही 'रां' रूप विश्व के उत्कर्ष निदान स्वरूप बहु शक्तिशाली माना गया है। इस प्रकार "सकलसंभासमानम्" यह प्रपञ्चरूप जगत् इसी 'रां' बीज के अन्तर्गत विद्यमान है।

—*—

रामेस्मिन् बीजे सकलवेदार्थ गर्भं कथं भवतीति प्रश्नः ?

'राम्' इस बीज में सकल वेदार्थ कैसे हो सकता है ?

इस पर विचार करते हैं कि समस्त वेद राम तत्त्व का ही गान करते हैं। लोक में वेदों की माता गायत्री कही गई है अर्थात् इस गायत्री मंत्र के अन्दर संपूर्ण वेदों का सार निहित है चतुर्वेद (ऋक्-यजु, साम, और अथर्व) के द्वारा जो गाया गया है, उसे गायत्री मंत्र कहते हैं।

"ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्"
इसी मंत्र को वेद माता गायत्री कहते हैं, किसी दूसरे को नहीं।

"तत्सवितुर्वरेण्यम्" इस गायत्री पद से हमें जीव मात्र को उपदेश मिलता है।

तत्=वह निष्प्रपञ्च ब्रह्म, सवितुः=सविता के रूप (सूर्य के रूप) में व्यक्त हुआ, उसी देव (राम) की उपासना करने के योग्य, भर्गः=ज्योतिमयस्वरूप हिरण्यगर्भ परमात्मा का हम लोग सुख शांति के लिये ध्यान करते हैं, वही प्रकाशमय परमात्मा हमारी बुद्धियों को सत्कर्म में प्रवृत्त करावें।

सगुण ब्रह्म का गान वेदों ने किया है। यही गायत्री मंत्र से सिद्ध होता है।

"य एषोऽन्तरादित्ये हिरण्यमयः पुरुषोदृश्यते"

(छान्दोग्य उपनिषद् अ० १, ख० ६, म० ३)

यह जो सूर्य मण्डल में स्थित स्वर्णमय देदीप्यमान पुरुष दीखता है अर्थात् वही परात्पर सगुण ब्रह्म है।

अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि वह देदीप्यमान पुरुष लोक में किस नाम से प्रसिद्ध है ? इस सम्बन्ध में ऋषियों ने प्रकाश डाला है,

सूर्य मण्डल मध्यस्थं सीतारामं समन्वितम्।
भर्ग वरेण्यं बिश्वेशं रघुनाथं जगद् गुरुम्॥

(सनत्कुमार संहिता में है)

अर्थ-सूर्य मण्डल में स्थित जो भर्ग (तेजोमय) स्वरूप जगत् के गुरु श्रेष्ठतमवरण (उपासना) करने योग्य सब पापों के नाशक विश्व के ईश (प्रभु) श्री सीताराम जी का ध्यान एवं उपासना करना चाहिये। अर्थात् सविता के अन्दर विद्यमान हैं उन्हें श्रीसीताराम कहते हैं। आदि कवि वाल्मीकि जी ने भी कहा है—

"इक्ष्वाकुवंश प्रभवो रामो नाम जनैः श्रुतः"

वह देदीप्यमान पुरुष इक्ष्वाकु वंश में प्रादुर्भाव हुआ लोक में उन्हें मनुष्य जाति ने 'रामनाम' ऐसा सुना।

उपासना क्षेत्र में इसी सगुण ब्रह्म का गान वेदों ने किया है, अतः यह सिद्ध हुआ कि गायत्री मंत्र एवं वेद इन्ही श्रीसीताराम का प्रतिपादन करते हैं और श्रीरामपुरुषोत्तम (राम) इस शब्द के वाच्य हैं, अब यह भी स्वाभाविक ही सिद्ध हो जाता है कि सकल वेदार्थ (राम) के अन्दर निहित हैं।

रामानन्दशब्दार्थ—

रामितिबीजप्रतिपाद्यं रहस्यत्रयानुष्ठानेन आनन्दयतीति रामानन्दः।

यद्वा—रामं दाशरथिं रहस्यत्रयाद्यनुष्ठानेन आनन्दयतीति रामानन्दः।
यद्वा—रामे दाशरथौ तद् वात्सल्य दिगुण तच्छरण्यत्वादि चिन्तनादिनानन्दो यस्य स रामानन्दः।

यद्वा—"विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तर पदयोर्लोपः" इत्युक्त्या भीमो भीमसेनो वेद व्यासो व्यास इतिवत् रामान् रामभक्तान् सुरसुरानन्दादीन् तत्त्वाद्युपदेशेन आनन्दयतीति रामानन्दः।

यद्वा—रामभक्तेषु तद् दर्शन संगादिनाऽऽनन्दो यस्य स रामानन्दः।
यद्वा—सीता च रामश्चएकशेषे रामौ=सीतारामौ स्वानुष्ठानेन आनन्दयतीति रामानन्दः।

यद्वा—तयोः पृथक् पृथग्गुणादि स्मरणेनाऽऽनन्दो यस्य स रामानन्दः।

रामनन्दो रामरूपोराममंत्रार्थ वित्कविः
राममंत्रप्रदो रम्यो राममन्त्ररतः प्रभुः ॥

विनीत, लेखक
स्वामी रामनारायण दास शास्त्री

❀ श्री मंत्रराज परम्परा ❀

सर्व प्रथम सवेश्वर भगवान् श्रीराम जी ने साकेत लोक दिव्य धामों में श्रियों की भी श्री सवेश्वरी सीता जी को राम मंत्र का उपदेश दिया। श्री जगदम्बा सीता जी ने समस्त जीवों के उद्धार की इच्छा से इस मंत्र राज को भूमितल पर प्रचार करने के लिये श्री हनुमान् जी को मंत्रराज का उपदेश दिया। सत् युग में ब्रह्मादि ऋषियों द्वारा प्रचार करने के लिये श्री हनुमान् जी को मंत्रराज का उपदेश दिया। सत्युग में ब्राह्मादि ऋषियों द्वारा प्रचार हुआ। त्रेता में वसिष्ठादि मुनियों द्वारा प्रचार हुआ द्वापर में वेदव्यासादि ऋषियों द्वारा प्रचार हुआ। योगि श्री शिव जी को सुख और आनन्द को देने वाला अविच्छिन्न रूप से आज तक इस भूमण्डल पर अवतीर्ण होकर श्री जगत्गुरुरामानन्दाचार्य्य जी कलियुग में प्रचार किया। इनका प्रादुर्भावका वर्णन वैश्वानर संहिता में इस प्रकार है।

"रामनन्दः स्वयं रामः प्रादुर्भूतो महीतले"

सीतानाथ समारम्भां रामानन्दाचार्य्यमध्यमाम्।
अस्मदा चार्य्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

१- अनन्त श्री विभूषित ब्राह्माण्ड नायक सर्वेश्वर श्रीरामजी महाराज
२- अनन्त श्री सर्वेश्वरी जगज्जननी जानकी जी महारानी।
३- अनन्त श्री भक्त शिरोमणि श्री हनुमान् जी
४- अनन्त श्री सृष्टि रचयिता श्री ब्रह्मा जी
५- अनन्त श्री आदि गुरु वसिष्ठ जी महाराज
६- स्मृति रचयिता श्री पराशर जी
७- पुराण रचयिता श्री वेद व्यास जो
८- श्री शुकदेव मुनि जी
९. श्री बोधायनाचार्य्य जी, (श्री पुरुषोत्तमाचार्य्य जी)
(बोधायनवृत्तिकर्त्ता = विशिष्टाद्वैत प्रवर्तक)

१०- श्री नरोत्तमाचार्य्य जी
११- ,, गङ्गाधराचार्य्य जी
१२- ,, सदाचार्य्य जी
१३- ,, रामेश्वराचार्य्य जी
१४- ,, द्वारानन्द जी
१५- ,, देवानन्द जी
१६- ,, श्यामानन्द जी
१७- ,, श्रुतानन्द जी
१८- ,, चिदानन्द जी
१९- ,, पूर्णानन्द जी
२०- ,, श्रियानन्द जी
२१- ,, हर्य्यानन्द जी
२२- ,, राघवानन्द जी
२३- ,, संप्रदायाचार्य्य अनन्त विभूषित श्रीरामानन्दाचार्य्य जी
२४- ,, सुरसुरानन्द जी
२५- ,, माधवानन्द जी
२६- ,, गरीबानन्द जी
२७- ,, लक्ष्मीदास जी
२८- ,, गोपालदास जी
२९- ,, नरहरि दास जी
३०- ,, श्रीमान् केवल रामदास जी (श्री कुबाचार्य्य जी के गुरु भाई श्रीराम चरित मानस रचयिता श्री गोस्वामी तुलसीदास जी
३१- ,, चिन्तामणि दास जी
३२- ,, दामोदर दास जी
३३- ,, मौजी रामदास जी
३४- ,, हरिभजन दास जी

३५- श्री हृदय रामदास जी

३६- ,, कृपा रामदास जी

३७- ,, रत्नदास जी

३८- ,, नृपति दास जी

३९- ,, शङ्कर दास जी

४०- ,, रसिक शिरताज श्री जीवाराम जी महाराज
(श्री युगल प्रिया जी महाराज)

४१- ,, रसिक शिरोमणि श्री युगलानन्दशरण जी महाराज

४२- पण्डित राज श्री जानकीवरशरण जी महाराज
(श्री प्रीतिलता जी महाराज)

४३- श्री राम बल्लभा शरण जी महराज
(श्री युगल विहारिणी जी महराज)

४४- श्री रामसुरत शरण जी महराज (श्री स्नेहलता जी महाराज)

ॐ गुरुदेवाय विद्महे, परम ब्रह्माय धीमहि तन्नो गुरू प्रचोदयात् ॥

ॐ जनकनन्दन्यै विद्महे रामबल्लभाय धीमहि
तन्नः सीता प्रचोदयात् ॥

ॐ दाशरथाय विद्महे सीता बल्लभाय धीमहि
तन्नो रामः प्रचोदयात् ॥

ॐ अञ्जनीगर्भाय विद्महे पवनपुत्राय धीमहि
तन्नो हनुमान् प्रचोदयात् ॥

अथ श्री गुरु अष्टक ।

वन्दे गुरुं जगद्वन्द्यं वेदवेदान्तपारगम् ।
मायातीतं महात्मानं परमानन्दकारणम् १
वन्दे संसारसारं सुखनिधिममलं शान्तिदं सौख्यसारम्,
संबन्धे नामनंतिप्रमुदितहृदयाः शाश्वताः शान्तचित्ताः ।
अज्ञानांज्ञानरूपं गतिमगतिगतां भावनं भावुकानां,
नीतिज्ञानां सूनीति स्समरसविदां श्री गुरोः पादद्वयम् २
भवतु भव्यमथस्तव साम्प्रतं यदिगुरोरवलम्बनमानसे ।
हृदिविकाशतया सुखमद्भुतं विगतमानमपारमवाप्यते ३
हे कल्याणनिधे महाशयविभो श्री जानकीशप्रद,
हे तापत्रय पापनाशन कृपापीयूषपूर्णाम्बुधे ।
हे दीनार्त महान्धकार सविता मायामनुष्याकृते
मह्यं दीनहृदेमलीनमतये प्रीतिंस्वकीयां दद ४
नमः सुन्दरेशं परेशं महेशं प्रकृत्यान्धकारघनप्रोद्यद्दिनेशम्
सदा ये भजन्तीह भक्त्याभवन्तं मनोभीष्टमापूर्णतां तूर्णमेति ५
नमः शुद्धायबुद्धाय गुरवे परमात्मने ।
शिष्याणां सुखरूपायशान्ताय शिवरूपिणे ६
यदा दृट्वा रामभद्रोजीवान् दुःखार्णवे गतान् ।
तदा वै गुरुरूपेण प्रादुर्भावो भवत्प्रभुः ७
तस्मात्सर्व्वात्मभावेनगुरुमेवाश्रयेत्सुधी ।
अनायासेनतस्याशुमहान्मोदःप्रजायते ८
गुरोरष्टकं ये पठन्तीह भक्त्या न तेषां कदाचिद्भवेद्भावहानिः
प्रतुष्टो महाराज राजोपि तेषां हरीरामभद्रोखिलेष्टं ददाति ९

वत्सरे द्विगुणान्केन्दौ चान्ते शुक्लेदि शुक्रयोः ।
जानकीशप्रपन्नेन गुरोरष्टक मीरितम् १०

ब्रह्मवैवर्त्त पुराणे ।

गुरुर्विष्णुर्गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्देवोमहेश्वरः
गुरुधर्म्मो गुरुःशेषः सर्वात्मानिर्गुणो गुरुः १
सर्व्वतीर्थाश्रमश्चैव सर्व्वदेवाश्रयोगुरुः ।
सर्व्वदेव स्वरूपश्च गुरुरूपो हरिः स्वयम् २
अभीष्ट देवेरुष्टे च गुरुःशक्तो हि रक्षितुम् ।
गुरौ रुष्टेऽभीष्टदेवो नहि शक्तश्चरक्षितुम् ३
सर्व्वेग्रहाश्च यं रुष्टारुष्टाश्चदेवब्राह्मणाः ।
त्वमेवरुष्टो भवसि गुरुरेवहि देवताः ४
न गुरोश्चप्रियश्चात्मा न गुरोश्च प्रियः सुतः
धनं प्रियं च न गुरोर्न च भार्य्या प्रिया तथा ५
न गुरोश्च प्रियो धर्म्मो न गुरोश्च प्रियं तपः ।
न गुरोश्चप्रियं सत्यं न पुण्यं च गुरोः प्रियम्

❀ लावनी ❀

श्रीसतगुरु दीन दयालु प्रणत हितकारी।
बिगरी मम जन्म अनेक की लेहु सँभारी॥
यह नरतन रतनहिं जात बिना प्रिय नामैं।
कैसे करि मोको मिलै नाथ अभिरामैं॥
निरहेतु की कृपाकटाक्ष करिय सुख धामैं।
चिंतौं चित हित प्रद चरित प्रभो वसुयामैं॥
विरदावलि पतित पुनीत सुहृगन निहारी।
बिगरी मम जन्म अनेक की लेहु सँभारी॥१॥
त्रिभुवन की सम्पति एक स्वाँससम नाहीं।
सो स्वांसा श्रीसीताराम नाम बिनु जाहीं॥
आत विपति हमारी पेखि गहो प्रभु बाहीं।
शरणागत आरति हरण परन तव आहीं॥
हे अन्तरज्ञ सर्वज्ञ स्वाति सुखकारी।
बिगरी मम जन्म अनेक की लेहु सँभारी॥२॥
जग में ठग सगरे भरे नहीं सग कोई।
सबही विधि अब हम नैन आपने जोई॥
यह सुर दुर्लभ तनु पाय हाय वय खोई।
अब चरण शरण तव आय कहूँ प्रभु रोई॥
अस कीजै कृपा कृपालु मिलै धनुधारी।
बिगरी मम जन्म अनेक की लेहु सँभारी॥३॥
श्रीअवध बास दिय खास राम रजधानी।
यहँ बांकी महिमा आप श्रीरामजी बखानी॥
अरजी गरजी को श्रवण सुनहु मुददानी।
सिय नाह मिलन उत्साह चाह जिय जानी॥

है श्री रामबल्लभा शरण भरोसा भारी।
बिगरी मम जन्म अनेक की लेहु सँभारी ॥४॥

❀ पद ❀

जो मेरो अवगुन उर धारो।
तो मिथिलेस नन्दनी स्वामिनि कोटि कलप नहिं मोर उवारो ॥
कौन सु क्रिया कीन मैं नाहीं यह संसार असार पनारौ।
वेद विदित यह विरद तिहारो सीसी सिसकत नाम विचारो ॥
जो ब्रह्माण्ड कोटि को नायक प्रीतम राम स्याम छवि भारो।
तौ बस रहत सदा पिय नायक रसिक शिरोमणि छवि मतिवारो ॥
यह जिय देखि पेखि प्रभुता निज नातो मिथिला ओर निहारो।
रूप अनूप शील गुण सीमा दासी श्री युगलप्रिया न विसारो ॥

❀ पद ❀

अरुझे दोऊ बसो दृग ऐसे। पै विचमाखन जैसे ॥
नयनन नयन वैन वैनन मिलि सुमन सुगन्ध सु जैसे।
अलि अलियां भलियां औसर लहि कलरव करति अभैसे।
श्रीचन्द्रकला कलि वीन बजावैं गानकला गावैं लै से ॥
श्रीयुगल प्रिया सुमृदंग थाप दै जुरी समाज समय से।
श्रीहेमलता श्री प्रीतिलता मिलि प्रिय तमाल तरु तैसे ॥
बैठे सरयू निकुञ्ज लाल ललि गलवहियां बरु वैसे।
श्रीयुगल विहारिनि लखैं युगलछबि भखैं अकथ मुख कैसे ॥

❀ पद ❀

एह दोऊ चन्द बसो उर मेरे।
दशरथ सुत श्रीजनक नन्दनी अरुण कमल कर कमल न फेरे।
बैठे सघनकुंज सरयूतट आस पास ललना गन घेरे ॥

ललित भुजा दिये अंस परसपर झुकि रहि केश कपोलन नेरे।
चन्द्रवती सिर चवर डोलावत चन्द्रकला तन हंस हंस हेरे॥
श्रीराम सखे छबि कहि न परत जब पान पीक मुख झुकझुक गेरे।

❀ पद ❀

देखि कै अरुझानो जियरा।
श्रीरामकुमार स्यामसुन्दर वर हमहिं नहीं सबहिन को हियरा॥
बन प्रमोद बिच जनकलली संग अली सकल जुरि आईं नियरा।
श्रीयुगल प्रिया यह छबि निरखन को हिय बिचवारों सुरति को दियरा॥

❀ पद ❀

वारि दीजै सुरति को दियरा।
प्रभा पाय दम्पति छबि सम्पति निरखि हरषि सीतल होइहैं हियरा।
विद्या प्रसंग भक्ति प्रेमादिकै कोइ न अवै अविद्या नियरा॥
श्रीसरयू तट अघट रास रस होय बहार बिहार सिय पियरा।
श्रीसद्गुरु महराज प्रणत हित यह कलिकाल विहालहि कियरा॥
लखि अनुगामि स्वामि निज बालक श्रीयुगलबिहारिनि करू हिय सियरा।

❀ आरती ❀

सजन लागीं आरती मृगनयनी।
कंचन थार कपूर की बाती गंध सुमन हर लैनी।
करहिं आरती छबि अविलोकहिं गान करैं पिक वैनी॥
चँवर छत्र सिर बिजन ढुरावति सहचरियां सुख ऐनी।
जल झारी सुचि पान डबन भरि सर्ग सुगन्ध सुख दैनी॥
सुख सोवहु अब सयन समय भयो मृदु मुसकाय दई सैनी।
हरषि निरषि छबि पर तृण तोरत मौन सुधारस ऐनी॥